Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 5, April-2019, ISSN 2230-7540

तक्षशिला कालीन पाणिनीय शिक्षा के उद्देश्य

Shashi Bala Kulshreshtha[1]* Dr. Abhishek Kulshreshtha[2]

[1] Research Scholar, Singhania University, Rajasthan

[2] Lecturer, B.S.A. College, Mathure

शोध सार – *आचार्य पाणिनी ने शिक्षा पद के सम्बन्ध में कहा है- "शिक्ष्यते विद्यतेऽनया इति शिक्षा" अर्थात् विश्व की किसी भी विद्या का ज्ञान प्राप्त कराने का साधन ही शिक्षा है। विद्या प्राप्त करा देने में ही अविद्या का निराकरण कर देना अन्तर्निहित है। प्रस्तुत शोध पत्र में तक्षशिक्षा विश्वविद्यालाय कालीन पाणिनीय शिक्षा के उद्देश्य का अध्ययन किया गया है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र का चतुर्मुखी विकास होता है। जिस प्रकार खान की गहराई से निकला खनिज 'हीरे का पत्थर' भालीभाँति तराशने पर ही प्रकाश की तरह चमकीले हीरे के रूप में प्रस्फुटित होता है, उसी प्रकार जड़ एवं अज्ञानी मनुष्य शिक्षा से ही परिष्कृत, सुसंस्कृत तथा परिमार्जित होकर सम्मानीय स्वरूप को प्राप्त होता है। निष्कर्षतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि शिक्षा से ही मानव में मानवता का आविर्भाव होता है।*

----------X----------

तक्षशिला कालीन भारतीय शिक्षा मनीषियों ने मनुष्य के चार पुरूषार्थ बताएँ हैं- यथा अर्थ, धर्म काम तथा मोक्ष। ये चारों पुरुषार्थ ऋग्वैदिक काल से चले आ रहे हैं। इनमें मोक्ष को मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य माना था। विद्या के द्वारा ही मोक्ष अमृत्व की सिद्धि हो सकती है। मोक्ष को मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य माना है- 'विद्ययाऽमृतमष्नुते'।। विश्व का विविध ज्ञान प्राप्त करना तथा मोक्ष के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहना ही विद्या ग्रहण करना है। अतः ज्ञान की प्राप्ति तो शिक्षा का उद्देश्य है ही।[1] इसके अतिरिक्त तक्षशिला कालीन शिक्षा प्रणाली के कतिपय और भी उद्देश्य हैं-

1. व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना:

तक्षशिला कालीन शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तित्व का विकास न होकर बहुआंगी अर्थात् चतुर्मुखी विकास करना था। जैसे- शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक आदि समस्त शक्तियाँ ऊध्वमुखी होकर विकासशील हो। यही सार्थक शब्दों में तक्षशिला कालीन शिक्षा का वास्तविक प्रायोजन था।

2. चरित्र निर्माण करना:

चरित्र निर्माण हेतु ब्रह्मचर्याश्रम की व्यवस्था की गई। इस आश्रम में ब्रह्मचारी के लिए स्वस्थ दिनचर्या एवं सार्थक शिक्षा व्यवस्था का प्रावधान किया गया। जिसके फलस्वरूप विद्यार्थी का चरित्र सुदृढ़ हो जाता था। विद्यार्थी में विषम परिस्थितियों से जूझने एवं सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता उत्पन्न हो जाती थी। व्यक्तित्व रूप में निखार आकर खरा व्यक्तित्व तैयार हो जाता था। ब्रह्मचर्य आश्रम का कठोर एवं नियमित जीवन व्यक्तित्व के दुर्गुणों का सर्वनाश करके उसे सद्गुण सम्पन्न व्यक्ति बना देता था।[2]

3. कत्र्तव्य पालन की भावना जागृत करना:

शिक्षा का प्रयोजन था कि व्यक्ति को उदार सहिष्णु तथा परोपकारी बनाना, दूसरों की आवश्यकता पूर्ति हेतु दान करने की प्रवृत्ति का विकास करना तथा किसी के धन का लोभ न करना। इस तरह की भावना उत्पन्न होने पर व्यक्ति में कठिन से कठिन उत्तरदायित्व वहन करने की क्षमता का विकास हो जाता था। अतः कहा जा सकता कि पाणिनिकालीन भारत में तत्कालीन शिक्षा का एक और उद्देश्य कत्र्तव्य पालन की भावना जागृत करना भी था। शिष्य का कत्र्तव्य था कि वह 'आचार्य योगीन रहें'। शिष्य और उसकी वे सारी क्रियाएँ, जिनसे आचार्य को शारीरिक सुख प्राप्त हो, 'आचार्य योगीन' कही गई हैं। इसलिए कष्ट सहकर भी आश्रम में रहना छात्र का कत्र्तव्य ही था।

www.ignited.in

उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त कुछ और भी ब्रह्मचारियों के कार्य एवं कत्तव्य थे जिनका उल्लेख सूत्रकालीन एवं स्मृतिकालीन ग्रन्थों में प्रचुर मात्रा में किया गया है-

1. छात्र जिन्हें ब्रह्मचारी कहते थे, से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे शान्त चित्त से भोजन करें। छात्रों के भोजन में तेज मसाले, खट्टे पदार्थ, मधु तथा माँस मदिरा वर्जित थे; क्योंकि आयुर्वेदिक द्रष्टिकोण से ये मानसिक प्रवृत्ति के थे। हाँ, भोजन की मात्रा पर कोई प्रतिबन्ध नहीं था।

2. छात्रों के लिए यह भी निर्देश था कि वह भिक्षाचर्या के लिए प्रतिदिन जाते और सच्चरित परिवारों में ही भिक्षा माँगे। सप्ताह में एक दिन भिक्षा नहीं माँगी जाती थी। भिक्षा में प्राप्त भोजन को वह गुरू को अर्पित कर देता था। इसके बाद गुरू द्वारा दिये गए भोजन को शिष्य ग्रहण करता था।

3. गुरू की सेवा करना और आश्रम (गुरूकुल) जिसे शोधार्थिनी तक्षशिला विश्वविद्यालय मानकर चल रही है, में समस्त कार्यों को संपन्न करना छात्र के कत्तव्य थे। अतः छात्र जल लाना, वाटिकाओं और खेतों का प्रबन्ध करना, पशुओं को चराना, वनों से ईधन एवं कुश लाना। तथा अग्निषाला में अग्नि प्रज्ज्वलित करना आदि कार्य करते थे।

4. छात्र का कत्तव्य था कि वह दैनिक कार्यों का भी निर्वाह करें। अतः वह सूर्योदय से पूर्व ही शैया का त्यागकर देता था। इसके बाद नित्य कर्मों से निवृत्त होकर स्वच्छ ताजे पानी से स्नान करके अपने शरीर को पवित्र करता था। वह प्रायः एवं सायं गायत्री मंत्र के साथ उपासना करता था।

4. प्राचीन साहित्य तथा संस्कृति को संरक्षण प्रदान करना:

भाष्यकार के अनुसार शिक्षा के दो फल होते थे- बौद्धिक विकास और नैतिक उन्नति और इन दोंनों का उद्देश्य था- प्राचीन संस्कृति की सुरक्षा।[3] अतः शिक्षा का एक और मुख्य प्रयोजन था- अर्जित ज्ञान का संरक्षण एवं उसका संवर्धन तथा परिमार्जन करना। यह तक्षशिला कालीन शिक्षा का ही चमत्कार था कि मौखिक परम्परा के द्वारा ही विस्तृत एवं व्यापक वैदिक साहित्य भी सुरक्षा निधि के रूप में संरक्षित रहा। प्रत्येक युग में तत्कालीन भारतीय शिक्षा मनीषी और मौलिक विचारक शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में नवीनतम मान्यताएँ प्रस्तुत करते रहे जैसे दर्शन, गणित, ज्योतिष, वैधक तथा रसायन शास्त्र आदि।

5. बौद्धिक और नैतिक विकास उत्पन्न कराना:

भाष्य के आधार पर भाष्यकर के इन समस्त वक्तव्यों को यदि हम एक साथ मिलाकर देखें तो स्पष्ट होगा कि वे शिक्षा के दो फल मानते थे- पहला बौद्धिक विकास और दूसरा नैतिक उन्नति। इन दोनों का उद्देश्य था प्राचीन संस्कृति एवं साहित्य की सुरक्षा। व्याकरण और उसके पढ़ने के सारे उपयोगों का भी समावेश इनमें हो जाता है। नैतिक विकास पर इतना जोर देने के कारण ही उन्होंने इस बात को बार-बार दोहराया है कि तप (कष्ट सहना तथा संयम) अध्ययन और ब्राह्मण माता-पिता से उत्पत्ति, ये तीन बातें मिलाकर किसी को ब्राह्मण बनाती है। जिनमें तप और अध्ययन दो बातें नहीं होती, वह केवल जाति से ब्राह्मण होता है। जाति के कारण वह, गौर-पिंगलाक्ष होता है और तप के कारण शुच्याचार।[4]

6. वेदों की रक्षा करना:

तक्षशिला कालीन शिक्षा के अन्तर्गत पाणिनी शिक्षा का उद्देश्य वेदों की रक्षा करना था क्योंकि पाणिनी, एवं उनके अनुगामी अन्य वैयाकरण एवं शिक्षा मनीषी वेद को सात धर्म मानते थे।[5] अतः पतंजलि ने कहा है कि ब्राह्मण को निष्काम भाव से षडंग सहित वेद का अध्ययन करना चाहिए और उनका अर्थ तत्व समझना चाहिए क्योंकि वेद-वेदांग साक्षात धर्म है।[6] वेदांगों में व्याकरण भी मुख्य विषय था। अतः पाणिनी की दृष्टि में व्याकरण का अध्ययन इसलिए परम आवश्यक था; क्योंकि वेदों में ऐसा व्याकरण के बिना असंभव है। जो व्यक्ति व्याकरण नहीं जानता, वह भला वेद को क्या समझेगा? इसलिए व्याकरण का ज्ञान वेद अध्ययन से पूर्व आवष्यक है। तक्षशिला कालीन शिक्षा में ऐसा विधान था। उपनयन संस्कार के बाद ब्राह्मण व्याकरण पढ़ते थे। जब वे उच्चारण सम्बन्धी आभ्यन्तर और बाह्य प्रयत्नों तथा उच्चारण के कारणों का सम्यक ज्ञान प्राप्त कर लेते थे, तब उन्हें वैदिक शब्दों का उपदेश दिया जाता था। महर्षि पतंजलि ने व्याकरण के अध्ययन पर जोर दिया और कहा कि व्याकरण के बिना वेद की रक्षा संभव नहीं है। जो लोप आगम और वर्ण विकार नहीं समझता है, वह भली-भाँति वेदों का पालन नहीं कर सकता।[7]

यज्ञ में बोले जाने वाले वेदमन्त्रों में लिंग, विभक्ति सम्बन्धी कुछ परिवर्तन आवश्यकतानुसार यत्र-तत्र करने पड़ते हैं। यह कार्य भी व्याकरण ज्ञान के बिना संभव नहीं है।[8] अतः कहा

www.ignited.in

जा सकता है कि यज्ञ करने-कराने वालों को व्याकरण जानने की भी आवश्यकता है।

यह सर्व विदित है कि ब्राह्मणों को शुद्ध शब्दों का ज्ञान होना चाहिए लेकिन वह भी बिना व्याकरण के नहीं हो सकता।[9]

इसके अलावा व्याकरण पढ़ने के और भी बहुत से लाभ है। स्वर या वर्ण की दृष्टि से अशुद्ध बोला गया शब्द वांछित अर्थ का बोधक नहीं होता यज्ञ में बोला गया दुष्ट या अशुद्ध शब्द वज्र बनकर यजमान का नाश कर डालता है।[10] इसके ठीक विपरीत जो व्यक्ति व्यवहार काल में शब्दों का यथार्थ उच्चारण करता है वह इस लोक तथा परलोक उत्कर्ष और प्रतिष्ठा का भागी बनता है और जो ऐसा नहीं कर सकता वह अपशब्दों का उच्चारण भ्रष्ट करता है।[11]

7. व्याकरण का अध्ययन आवश्यक रूप से कराना:

एक-एक शुद्ध शब्द के अनेक अपभृंष रूप समाज में प्रयुक्त होते हैं अतः उनके उच्चारण दोषों से कोई यह कहकर छुटकारा नहीं पा सकता है कि मैंने अज्ञानवश अशुद्ध उच्चारण किया है क्योंकि ब्रह्महत्या और सुरापान के समान अनजाने में भी अशुद्ध शब्द का व्यवहार दोष उत्पन्न करता है। व्याकरण न जानने से ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत का भी ज्ञान नहीं होता। ऐसे व्यक्ति प्लुतत्व-नियम न जानने के कारण आर्यवादन का ठीक उत्तर नहीं दे सकते।[12] उनकी स्थिति स्त्रियों जैसी हो जाती है। याज्ञिकों को सविभक्ति प्रयास करने पड़ते हैं। उसके लिए भी व्याकरण जानना आवश्यक है।[13] शब्द महानदेव के रूप में प्राणियों में निवास करता है। हमें भी महान देव से अपना साम्य करने के लिए व्याकरण जानना चाहिए।[14] जो लोग छने हुए सत्तू की तरह विकार रहित वाणी बोलते हैं, उनकी जिह्वा पर मंगलमयी सरस्वती निवास करती है।[15] अपशब्द बोलने के बाद प्रायश्चित स्वरूप सात्विक दृष्टि रखनी चाहिए, ऐसा याज्ञिक लोग कहते हैं।[16] जन्म से दस दिन बाद पुत्र का नामकरण करना चाहिए। नामकरण के सम्बन्ध में धर्म स्त्रकारों ने जो नियम स्थिर किये हैं, उनका पालन बिना व्याकरण जाने नहीं हो सकता।[17] व्याकरण ज्ञान से ही शुद्ध विभक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य वेद-रक्षा का था; जोकि व्याकरण के अध्ययन द्वारा संभव होता है। इसलिए तक्षशिला कालीन शिक्षक विशेषतः पाणिनी तथा महर्षि पतंजलि वेदांगों के अध्ययन पर बल देते थे-जैसे शिक्षा एवं व्याकरण आदि। अब क्योंकि वेद रक्षा का सर्वाधिक उत्तरदायित्व ब्राह्मणों पर था अतः उन्होंने ब्राह्मण शिक्षा संस्थाओं और[18] शिक्षा पद्धति का ही विशेष उल्लेख किया है।

8. बालक में शिष्टता उत्पन्न कराना:

पाणिनी कालीन भारत में भाष्यकारों की दृष्टि में शिष्टों का बड़ा ऊँचा स्थान था। महर्षि पतंजलि ने कहा है शिष्ट ही समाज की धुरी होते हैं, ये दो प्रकार से बनते हैं, पहले शिक्षा से और इसके चरित्र से पाणिनी कालीन भारत में तक्षशिला कालीन शिक्षा में शिक्षा का मूल व्याकरण ज्ञान था, इसलिए व्याकरण शिष्ट माने जाते थे। शिष्टता शास्त्र द्वारा ही होती है और व्याकरण..... होते हैं।[19] इसलिए उन्हें शिष्ट कहना चाहिए, यह पतंजलि का विचार था। शिक्षा के अतिरिक्त निवास और आचार भी शिष्टत्व के चिन्ह थे। आर्यावत्र्त के निवासी ब्राह्मणों में जो असंगृही, अलोलुप जितेन्द्रिय और किसी विशेष शास्त्र में पारंगत होते थे, वे शिष्ट माने जाते थे। इनकी कही हुई बात प्रमाणित मानी जाती थी। भाष्यकार ने अष्टाध्यायी का प्रयोजन शिष्ट ज्ञान माना है। अष्टाध्यायी के अध्ययन से व्यक्ति में वह योग्यता आती है कि वह शिष्टों और अशिष्टों की पहचान कर सके।

निष्कर्ष:-

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि शिक्षा के द्वारा ही ज्ञान की प्राप्ति की जा सकती है। तक्षशिला कालीन शिक्षा का मुख्य उद्देश्य सर्वांगीण विकास, चरित्र-निर्माण, कर्तव्यपालन, संस्कृति का संरक्षण तथा मुख्य वेदरक्षा का था; जोकि व्याकरण के अध्ययन द्वारा सम्भव होता है। इसलिये तक्षशिला कालीन शिक्षक विशेषतः पाणिनी तथा महर्षि पतंजलि वेदांगों के अध्ययन पर बल देते थे। जैसे- शिक्षा, व्याकरण आदि। चूँकि, वेदरक्षा का सर्वाधिक उत्तरदायित्व ब्राह्मणों पर था; अतः उन्होंने ब्राह्मण शिक्षा संस्थाओं और शिक्षा पद्धति का ही विशेष उल्लेख किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोयल डॉ. प्रीतिप्रभा: भारतीय संस्कृति, पृ0 सं0-106
2. गोयल डॉ. प्रीतिप्रभा: भारतीय संस्कृति, पृ0 सं0-106

www.ignited.in

3. अग्निहोत्री डॉ. प्रभुदयाल: पतंजलि कालीन भारत, पृ0 सं0-417

4. पतंजलि भाष्य, 2/2/6 पृ0 सं0-340

5. अग्निहोत्री डॉ. प्रभुदयाल: पतंजलिभाष्य महाभाष्य पर आधारित पतंजलि कालीन भारत, पृ0 सं0-414

6. ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडंगो वेदोऽयेयो ज्ञेयष्च प्रधानं च शडंगेशु व्याकरणम्।।, अ0-1, पृ0 सं0-3

7. रक्षार्थ विदानामध्येयं व्याकरण्, लोपागमवर्ण विकारज्ञो हि सम्यगवेदान् परिपालयिश्यति।। अ0-1, पृ0 सं0-2

8. पतंजलि महाभाष्य: अ0-1, पृ0 सं0-2

9. पतंजलि महाभाष्य: अ0-1, पृ0 सं0-3

10. दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्यमाह सवाग वज्रो यजमानं हिनान्ति यथेन्द्रः शुत्र स्वरतोऽपराघात।।, अ0-1, पृ0 सं0-4

11. वही पृष्ठ: अ0-1, पृ0 सं0-4

12. अवद्रिांसः प्रत्यविभवोद नाम्नो येन प्लुतिं विदुः। कामं तेषु तु विप्रोष्य स्त्रीस्वायमहं वदते।। अ0-1, पृ0 सं0-6

13. वही पृष्ठ: अ0-1, पृ0 सं0-6

14. महोदवी भार्त्या अशिवेष महता देवेन न साम्यं स्मयादित्य ध्येयं व्याकरणम्।।, अ0-1, पृ0 सं0-7

15. वही पृष्ठ: अ0-1, पृ0 सं0-8

16. वही पृष्ठ: अ0-1, पृ0 सं0-9

17. वही पृष्ठ: अ0-1, पृ0 सं0-9

18. अग्निहोत्री डॉ. प्रभुदयाल: पतंजलि कालीन भारत, पृ0 सं0-416

19. के पुनः शिष्ट? वैयाकरणः। कुल एतत् शास्त्र पूर्विकाः हि शिष्टिः शिष्टिपूर्वकं च शास्त्रम् एवं तर्हि निवासत आचार तश्च। एतस्मिन् आर्य निवासे ये ब्राह्मणः कुम्भी धान्याः अलोकुपा अग्रध्यमाण कारणाः। किंचितन्तरेण कस्याष्चिद् विद्यायाः पारणास्तत्र भवन्तः शिष्य शिष्ट ज्ञानार्था।: अष्टाध्यायी, 6/3/109 पृ0 सं0-359

Corresponding Author

Shashi Bala Kulshreshtha*

Research Scholar, Singhania University, Rajasthan

shivanisk1983@gmail.com

www.ignited.in